SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

कलि का माणस कौन विचारूँ

रूपा चारी, हिंदी विभाग,
ज्ञान प्रबोधिनी मंडल, श्री मल्लिकार्जुन और श्री चेतन मंजु देसाई महाविद्यालय, काणकोण, गोवा, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
रूपा चारी, हिंदी विभाग,
ज्ञान प्रबोधिनी मंडल, श्री मल्लिकार्जुन और
श्री चेतन मंजु देसाई महाविद्यालय,
काणकोण, गोवा, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 01/12/2020
Revised on : -----
Accepted on : 01/12/2020
Plagiarism : 00% on 01/12/2020

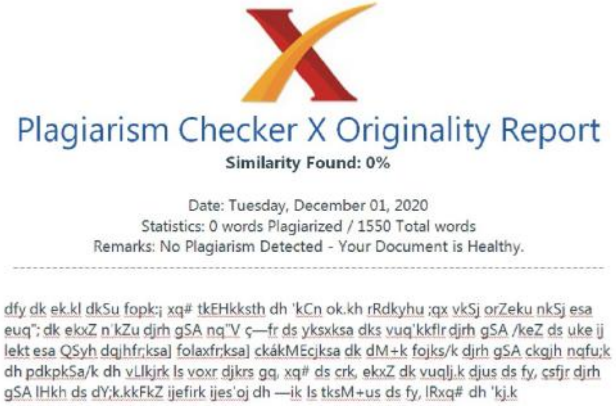

शोध सार

गुरु जाम्भोजी की शब्द वाणी तत्कालीन युग और वर्तमान दौर में मनुष्य का मार्ग दर्शन करती है। दुष्ट प्रकृति के लोगों को अनुशासित करती है। धर्म के नाम पर समाज में फैली कुरीतियों, विसंगतियों, बाह्याडम्बरों का कड़ा विरोध करती है। बाहरी दुनिया की चकाचौंध की अस्सारता से अवगत कराते हुए गुरु के बताए मार्ग का अनुसरण करने के लिए प्रेरित करती है। सभी के कल्याणार्थ परमपिता परमेश्वर की कृपा से जोड़ने के लिए सतगुरु की शरण में जाने का आह्वान करती है क्योंकि सतगुरु ही प्रभु की महिमा का बोध कराता है कि उसकी अनुकम्पा के बिना संसार में क्यों कार्य सम्पन्न नहीं होता है–''सतगुरू है सहज पिछाणी, कृष्ण चरित बिन काचो करवे रह्यो न रहसी पांणी।'' कच्चे घड़े में न तो कभी जल ठहरा और न ही भविष्य में ठहर सकेगा, लेकिन कृष्ण की कृपा से असंभव भी संभव हो जाता है।

मुख्य शब्द

कुरीतियाँ, विसंगतियाँ, बाह्याडम्बर, कृष्ण, सतगुरू कल्याण।

कृष्ण का कृपा–पात्र बनने के लिए मनुष्य को बाह्य आकर्षणों का परित्याग का मनमुखी से गुरमुखी बनने की साधना करनी होगी। ज्योतिर्मय सत्ता से जुड़ने के लिए बाह्य वृत्तियों को त्यागकर आन्तरिक वृत्तियों की ओर उन्मुख होना पड़ता है। यह भीतर की यात्रा मनुष्य को सद्वृत्तियों से जोड़ देती है–''अड़सठ तीर्थ हिरदै भीतर, बाहर लोकाचारूं।'' भीतर की यात्रा कलि के माणस को आत्मबल प्रदान करती है। यह आत्मबल प्रभु की कृपा से जाग्रत होता है। सद्गुरु का मार्ग दर्शन ही निरंजन की सत्ता का बोध कराता है :

जपां तो एक निरालंभशिम्भू, जिहिं के माई न पीऊं।
न तन रत्तूं न तन धातूं, न तन ताव न सीऊं।

सर्व सिरजत मरत विवरजत, तास न मूल ज लेणा कीयों।
अइयालो अपरंपर बाणी, म्हे जपां न जाया जीऊं।

वह सत्य सम्पूर्ण चराचर सृष्टि के कण–कण में ज्योति स्वरूप में सर्वत्र विद्यमान है। प्रत्येक शरीर में स्थित जीवात्मा उसी प्रभु का प्रतिबिम्ब है। दोनों में कोई अन्तर नहीं है। यदि ऐसा भेद लगता है, तो उपाधि के कारण है। उस परमसत्ता का अनुभव सात्विक वृत्ति के लोग ही करते हैं। वह अनादि अनन्त, अजन्मा स्वयंभू सर्वत्र विद्यमान है। मन की एकाग्रता से स्थित प्रज्ञ होकर उसका अनुभव किया जा सकता है। जिस मनुष्य का अन्तःकरण पवित्र, राग–द्वेष से रहित और शुद्ध आचार–विचार वाला होता है, वह जाति–पाँति, ऊँच–नीच से परे है, वही उस ज्योति स्वरूप का अनुभव कर सकता है–'भवन भवण म्हें एका जोती।' का एहसास दर्द की सह–अनुभूति से जोड़ता है, तब मन में मानवीय भाव जाग्रत हो उठता है। सबका दर्द अपना ही प्रतीत होता है–''आप खुदाय बंद लेखौ मांगै, रे वीन्है गुन्है जीव क्यूं मारो। थे तक जाणों तक पीड़ न जांणो।'' मनुष्य स्वार्थवश अथवा अनजाने में पाप कर्म करने में लग जाता है। शुभ कर्म तो किये नहीं, सिर पर पापों की गठरी भारी हो जाती है। इसी में युवावस्था बीत गई, कभी विष्णु का सुमिरन नहीं किया। वृद्धावस्था आ गई। सभी का समय निश्चित है। इस जन्म–जीवन का मूल्य कैसे चुकाएगा?

अपने कर्मों का दोष प्रभु को देना सर्वथा अनुचित है। यह तो कलि के 'माणस' का दोष है। उसकी विचारहीनता का परिणाम है–'विष्णु न दोष किसो रे प्राणी, तेरी करणी का उपकारूं।'

प्रसंगवश जो सम्वाद गुरु जाम्भोजी ने तत्कालीन समाज को प्रबोधित करने हेतु जाट समुदाय से किया था, तब उन्होंने मूल से जुड़ने पर जोर दिया था–'विष्णु विष्णु भण अजर जरीजै, यह जीवन का मूलूं।' गुरु जाम्भोजी सर्वाधिक जोर करनी पर दिया है। शुभ कर्मों से रहित यही जन्म निष्फल हो जाएगा। सत् संगति में मन लगा जो दोनों का भला होगा, अन्यथा सुकरत रहित यह जीवन रूपी रथ बिना गुरु कृपा के अथाह भव सागर में डूब जाएगा। संसार सागर से पार उतारने वाला सत् गुरु मिलना बहुत कठिन है। संयोग से ही सतगुरु मिलता है जो आपकी नौका को इस कलिकाल में पार लगा सकता है, अन्यथा डूबना तो निश्चित है। कृष्ण की कृपा से ही भव सागर को पार किया जा सकता है। बेड़ी दृष्टांत उल्लेखनीय है :

बेड़ी काठ संजोगे मिलिया, खेवट खेवा खेहूं।
लोहा नीर किस विध तरिबा, उत्तम संग सनेहूं।
बिन किरिया रथ बैसैला, ज्यूं काठ संगीणी लोहा नीर तरीलूं।

इस युग का मनुष्य सदाचार से रहित हो मोह–माया के जंजाल में फंसा है। झूठे अहं में अपना जीवन नष्ट कर रहा है। मृत्यु की तरफ जा रहा है, उसे उबारना कठिन है। धार्मिक और सात्विक वृत्ति वालों को मात्र सहारे की आवश्यकता है, उनका मैं उद्धार कर देता हूँ। दुष्ट वृत्ति वालों को मैं सदाचार से जोड़कर संमार्ग पर ले आता हूँ। लेकिन कलि का माणस सात्विक और अन्तर्मुखी प्रवृत्ति को मनमुखी होता जा रहा है। इस युग में भौतिकवादी प्रवृत्तियों का मकड़जाल सबको माया के नए–नए रूपों में लिप्त कर रहा है। अनेक तरह के विकार अमानवीय, असत्य, अनाचार, दुव्यवहार आदि दोष अन्न में घुण (कीड़े के समान) खोखला किए जा रहे हैं, फिर भी अयाना बना हुआ है :

वेद कुराणं जालूं, भूला कुजीव कुजांणी।
वैसंदर नांही नख हीरूं, धरम पुरिख सिरजीवै पूरूं।
कलि का माया जाल फिटा करि प्रांणी,
गुर की कलम कुरांण पिछांणी।
दीन गुमांन सैतांन चुकावौ, ज्यौं तिस चुकावै पांणी।
नर पूरौ सरि विणजै हीरा, लेस्यै जांरे हिरदै लोयण।
अंधा रह्या इंवांणीं, निरखि लहो नर निरहारी।
जिण चौखंड भीतरि खेल पसारी, जंपौ रे जिणि जंप्यां लाभै।

रतन काया एक हां'णी, कांही मारूं कांहीं तारूं।
क्रिया विहूंणा पर हंस या'रूं, सेल दहूं डबारूं ऊंन्हां।
ईह कलि एह क हां'णी। केवल न्यानी थल सिरि आयौय परगट खेल पसारी।
कोड़ि तेतीस पहूंचण हारी, ज्यूँ छकि आई सा'री।।

कलियुग में व्यास गद्छी पर बैठे महन्त, पुरोहित और विभिन्न धर्माचार्य वेदों, उपनिषदों, गीता आदि शास्त्रों में निहित सत्य और ज्ञान की चर्चा तो करते हैं, परन्तु आचार–विचार और व्यवहार में उसका पालन नहीं करते हैं। अतः शीलहीन ज्ञान किसी का भी भला नहीं कर सकता। ऐसे योगी शास्त्र आदि को पढ़ तो लेते हैं, किन्तु अनुभवहीन होते हैं। सुनी–सुनाई बातों से लोगों को भ्रमित करते हैं। ऐसे लोगों ने वेद–शास्त्र के मार्ग को छोड़कर दन्त कथाओं द्वारा अपने सिद्ध होने का दावा करते हैं–'पढ़ वेद कुराण कुमाया जालों, दंत कथा जुग छायो।' सिद्धों के चमत्कार द्वारा ऐसे महन्त और पुरोहित और पंडों ने भोले–भाले लोगों को भरमाकर पाखण्ड के जाल में फँसा रखा है। ये सभी साधक न होकर मनमुखी हैं। प्रसंग 46 के सन्दर्भ में 'इह तो चेडो तुच्छ है, जाणंत थोड़ी बात। कलि के चेड़े आवसी, वै पलटे सकल जमात।' के प्रति उत्तर में यह सबद कहा था। उल्लेखनीय है :

चोइस चेड़ा कालिंग केड़ा, अधिक कलावंत आयसै।
वै फेर आसन मुकर होय बैसेला, नुगरा थान रचायसै।
जाणत भूला महा पापी, बहूं दुनियां भोलायसै।
दिल का कूड़ा कुड़ियारा, उपंग बात चलायसै।
गुर गहणां जो लेवे नांही, दश बंध घर बोसायसै।
आप थापी महा पापी, दग्घी परलै जायसै।
सतगुरू के बेड़े न चढ़ै, गुरू स्वामी नै भायसै।
मंत्र बेलू ऋद्ध सिद्ध करसै, दे दे कार चलायसै।
काठ का घोड़ा निरजीवता, सरजीव करसै, तानै दाल चरायसै।
अधर आसन मांड बैसेला, मुवा मड़ा हंसायसै।

गुरू जाम्भोजी कलियुग में आचार–विचार द्वारा लोगों को भव सागर पार कराने हेतु उनका मार्ग दर्शन करते हुए उनसे बार–बार आग्रह करते हैं कि 'जे थे गुरू का शब्द मानीलो, लांघिबा भवजल पारूं। आसण छोड़ी सुखासण बैठो, जुग जुग जीवै जम्भ लुहारूं।' अभी समय है है गुरु की शरण में आ जाओ। दिन का भूला यदि रात्रि में लौट आए तो उसके जीवन में सुधार की संभावनाएँ बनी रहती है। भव सागर के माया जंजाल से विष्णु का आरध नही मुक्त कर सकता है। संमार्ग पर ला सकता है। मन को प्रभु सिमरन में स्थिर करते हुए शुभकर्म कीजिए। परिश्रम से रोजी–रोटी उपार्जित कीजिए। पत्थर या धातु से बनी मूर्तियों से लगाव मुक्ति का मार्ग नहीं हो सकता :

विष्णु विष्णु तूं भण रे प्राणी, जो मन मांनै रे भाई।
दिन का भूला रात न चेता, कांय पड़ा सूता आस किसी मन थाई।
तेरी कुड़काची लगवाड़ घणों छै, कुशल किसी मन भाई।
हिरदै नाम विष्णु को जंपो, हाथे करो खाई।
हर पर हरि की आंण न मानी, भूला भूल जपी महमाई।
पाहन प्रीत फिटाकर प्राणी, गुर बिन मुक्त न जाई।

इस कलियुग में मुक्ति का एक मात्र और सर्वोत्तम मार्ग है–'सदाचरण'। 'मानूं एक सुचील सिनानूं' स्नान से से बाह्य शुद्धि होती है, जबकि शील व्रत आन्तरिक शुचिता का आधार है। सफलता का, मुक्ति का सबसे श्रेष्ठ उपाय है उसमें समस्त नियम समाहित हैं। जीवन की सार्थकता उनके पालन में निहित है। ये नियम मोक्ष का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं–'सहजे शीले सहज बिछायो, उनमन रह्य उदासूं। मनुष्य झूठ, छल–कपट युक्त वचन लोभवश ही बोलता है जो इनका परित्याग कर मान–अपमान और घमण्ड को छोड़ संतोष, संयम और सत को अपने आचार–विचार में धारण कर लेता है, उसका आचारण धर्ममय हो जाता है–'सदा संतोषी सम उपकरणां, म्हे तजिया

मान अभिमानूं।' यह वाणी मनुष्य को जीने की राह दिखाती है–'जीवत मरो रे जीवत मरो, जिन जीवन की विध जांणी।' यह वाणी सोते को जगाती है। जीवन के लक्ष्य को पाने के मार्ग पर ले जाती है। गुरु की महत्ता का बोध कराती है। नवण का महत्त्व बताती है। गोवलवास में सुकरत द्वारा सच्चे घर में प्रवेश का आधार देती है। उल्लेखनीय है :

काची काया दृढ़ कर सींचो, ज्यूं माली सींचे बाड़ी।
ले काया बासन्दर होमो, ज्यूं इन्धन की भारी।
शील स्नाने संजमें चालो, पाणी देह पखाली।
गुरू के वचन निंव खिंव चालो, हाथ जपो जलमाली।
धर आगी इत गोवलवासो, कूड़ी आधो चारी।
सुकरत जीवन सखायत होयसी, हेत फलै संसारी।

यह सबद वाणी जागरण काल की है। कलयुग में अचेत पड़े माणस को होश में लाने का प्रयास है। जो जाग जाता है, वह तर जाता है अन्यथा 'कलि का माणस कौन विचारूं'। इस कहावत को चरितार्थ करता है–भीगा है पण भेद्या नांही, पाणी मांह पखाणों।'

निष्कर्ष

अतः कहना होगा कि गुरु जाम्भोजी की शब्द वाणी सबका मार्गदर्शन करती है। समाज में जो घटक अनुचित व्यवहार करते हैं, उनपर मार्गदर्शन की दृष्टि रखती है। दुराचारी और अधर्मी लोगों को ठिकाने पर लाने का प्रयास करती है। समाज में बुरे व्यवहारों का कडा विरोध करती है। गुरु जाम्भोजी के बताए गए मार्ग पर चलने के लिए हर एक मानस को उसी मार्ग पर चलना होगा और अपना जीवन सुखकर और कल्याणकारी बनाना होगा। यह हर दिशा और हर आयाम में संभव तभी होगा जब कालि का का मानस स्वयं गुरु द्वारा बताए हुए मार्ग पर चलने के लिए बाधित होगा।

सन्दर्भ सूची

1. जम्भसागर, टीकाकार–कृष्णानन्द आचार्य सबद–1, पृ.–22
2. वही, सबद–3, पृ.–27
3. वही, सबद–5, पृ.–31
4. वही, सबद–6, पृ.–32
5. वही, सबद–11, पृ –41
6. कांय रे मुरखा तै जन्म गुमायो, भुंय भारी ले मारूं।
   जं दिन तेरे होम नै जाप नै, तप नै किरिया।
   गुरू नै चीपन्थन पायो , अहल गई जमवा रूं।
   ताती बेला ताव न जाग्यो, ठाढ़ी बेला ठारूं।
   बिम्बै बैला विष्णु न जंप्यो , ताते बहुत भई कसवारूं। –वही, सबद–13, पृ.–43
7. वही, पृ –45
8. वही, सबद–15, पृ.–49
9. वही, सबद–16, पृ.–50
10. जम्भवाणी 1/4गुटका1/2, डॉ. हीरालाल माहश्े वरी, सबद–72, पृ.–147

11. 1/4क1/2 काजी कथै कुरान कूं, पण्डित वाचौ वेद।
    इनके ज्ञान उपज्या नही, मिटा न संसृत खेद। –जम्भसागर, पृ.–88
    1/4ख1/2 वही, सबद–92, पृ.–194
12. जम्भसागर, सबद–90, पृ.–189
13. वही, सबद–96, पृ.–203
14. वही, सबद–97, पृ.–205
15. वही, सबद–104, पृ.–219
16. सहजे शीले सहज बिछायो, उनमन रह्या उदासूं।
    जुगे जुगन्तर भवे भवन्तर, कहो कहाणी कासूं।
    रवि ऊगा जब उल्लू अन्धा, दुनिया भया उजासूं।
    सतगुरू मिलिया सत पथं ा बतायौ भ्र ांत चुकाई, सुगरा भयो विश्वासूं।
    जां जां जांण्यो तहां प्रवाण्यो, सहज समाणो, जिहि के मन की पूगी आसूं।
    जहां गुरू त चीन्हों पन्थ न पायो, तहां गल पड़ी परासूं।
17. वही, सबद–107, पृ.–223
18. वही, सबद–99, पृ.–210
19. वही, सबद–98, पृ.–208
20. वही, सबद–86, पृ.–181
21. जुग जागो जुगजाग पिराणी, कायं जागंता सोवो। –वही

****